समाज विकासमाला

बद्रीनाथ

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

समाज-विकास-माला : १

बद्रीनाथ

तीर्थ-यात्रा का रोचक हाल

लेखक

विष्णु प्रभाकर

संपादक

यशपाल जैन

१९५९
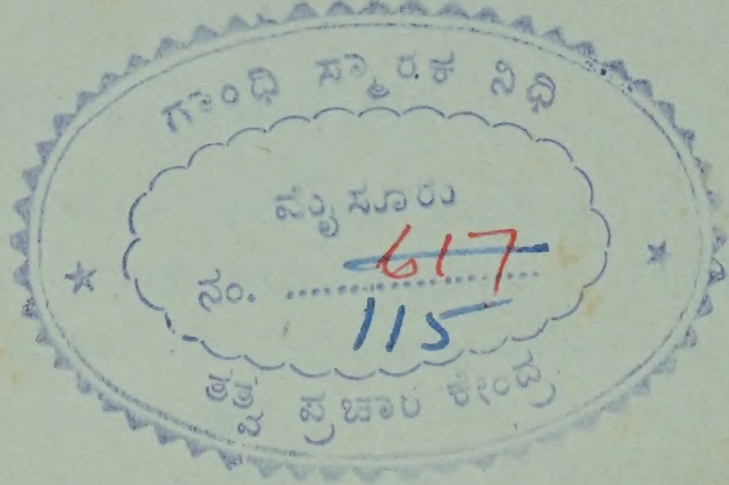
सस्ता साहित्य मंडल-प्रकाशन

समाज-विकास-माला

हमारे देश के सामने आज सबसे बड़ी समस्या करोड़ों आदमियों की शिक्षा की है। इस दिशा में सरकार की ओर से यदि कुछ कोशिश हो रही है, तो वही काफी नहीं है। यह बड़ा काम सबकी सहायता के बिना पार नहीं पड़ सकेगा। बालकों तथा प्रौढ़ों की पढ़ाई की तरफ जबसे ध्यान गया है, ऐसी किताबों की मांग बढ़ गई है, जो बहुत ही आसान हों, जिनके विषय रोचक हों, जिनकी भाषा मुहावरेदार और बोल-चाल की हो और जो मोटे टाइप में बढ़िया छपी हों।

इस पुस्तक-माला को हमने इन्हीं बातों को सामने रखकर चालू किया है। इसमें कई पुस्तकें निकल चुकी हैं। इन सबकी भाषा बड़ी आसान है। विषयों का चुनाव सावधानी से किया गया है। छपाई-सफाई के बारे में भी विशेष ध्यान रखा गया है। हर किताब में चित्र भी देने की कोशिश की है।

यदि पुस्तकों की भाषा, शैली, विषय और छपाई में पाठकों को सुधार की गुंजाइश मालूम हो, तो उसकी सूचना निस्संकोच देने की कृपा करें।

चौथा संस्करण

बड़े हर्ष की बात है कि इस पुस्तक का चौथा संस्करण इतनी जल्दी प्रकाशित हो रहा है। इस माला की सभी पुस्तकें पाठकों को पसंद आ रही हैं, इससे हमें बड़ा आनंद होता है। हमें विश्वास है कि इन सामयिक और उपयोगी पुस्तकों को पाठक चाव से पढ़ेंगे और इनके प्रचार में हाथ बटायेंगे।

—मंत्री

पाठकों से

आप इस किताब को पढ़िये। पढ़कर आपको लगेगा कि तीरथ कर लिया। हिमालय की सैर कर ली। जंगलों में घूम लिया। नदियां देख लीं। झरनों की मीठी आवाज सुन ली।

कहीं कुछ समझ में न आये, तो हमें लिखिये। कहीं कुछ अच्छा न लगे, तो हमें खबर दीजिये। कहीं कुछ बदलवाना चाहते हों, तो सुझाव दीजिये।

ये किताबें आपके लिए लिखी जा रही हैं। आपकी कठिनाई हम जरूर सुनेंगे, जरूर दूर करेंगे।

आप इस किताब को पढ़ लें। पसंद आये, तो दूसरों से कहें कि वे भी पढ़ें।

—संपादक

ब द्री ना थ

उस दिन शाम होते ही दीनू काका तेजी से घर से निकले, तो काकी ने पूछा, "कहां जा रहे हो जी ?"

काका ने जवाब दिया, "बद्रीनाथ।"

काकी की समझ में नहीं आया। चौंककर बोलीं, "मजाक करते हो ! ठीक बताओ।"

काका हंसे और बोले, "अरे, अपने रामनाथ बद्रीनाथ से आये हैं न ? आज चौपाल में वह वहां की कहानी सुनायेंगे।" कहकर वह हवा हो गये।

उधर चौपाल में लोग आ चुके थे और चौधरी बदलूराम रामनाथ से कह रहे थे, "हां, बेटा, अब तुम अपनी कहानी शुरू करो।"

रामनाथ ने पूछा, "चाचाजी, पहले बद्रीनाथ की कहानी सुनाऊं या अपनी यात्रा का हाल ?"

भागीरथ लाला चौधरी की बगल में बैठे कोई भजन गुनगुना रहे थे। रामनाथ की बात सुनकर बोले, "बेटा, यात्रा से शुरू करो। कहानी बद्रीनाथ पहुंचकर सुनाना।"

इस पर गोपाल पंडित ने कहा, "बद्रीनाथ पहुंच-कर ! क्या हम सब बद्रीनाथ चलेंगे ? कब ?"

और वह हंस पड़े। दूसरे लोग भी हंसने लगे, पर भागीरथ लाला ने बिना हंसे जवाब दिया, "अभी चलेंगे। यात्रा की कथा सुनना यात्रा करने के बराबर है।"

हंसी बंद हो गई। रामनाथ ने शुरू किया : "बहुत से लोग कहते हैं कि बद्री-केदार जानेवाले घर लौट-कर बीमार पड़ जाते हैं। बहुत-से मर भी जाते हैं। लेकिन हम लोगों का तो कान तक गरम नहीं हुआ। बात असल में यह है कि एक तो बहुत करके बड़े-बूढ़े और बीमार लोग यात्रा करने जाते है। मार्ग है विकट, सो बेचारे थक जाते हैं। फिर वे लोग खाने-पीने की सावधानी नहीं रखते। जैसे झरनों का पानी नहीं पीना चाहिए। पीयें, तो कुछ देर रखकर, नहीं तो दस्त आ जाते हैं।"

चौधरी बोले, "ओहो, यह बात है ! बहुत-से आदमी दस्तों से ही मरते हैं।"

"ठीक कहा आपने," रामनाथ बोला, "पानी के लिए जगह-जगह सरकार ने नल लगा रखे हैं, तो भी लोग झरनों का पानी पी लेते हैं। फिर लोग सफाई का विचार भी नहीं करते। और सबसे बड़ी बात तो

यह है कि बहुत-से लोग यह सोचकर ही जाते हैं कि बस, अब तो मरना है।"

इस पर सब हंस पड़े। चौधरी ने कहा, "भाई, बात रामनाथ ने पते की कही है।"

रामनाथ बोला, "अब तुम ही देख लो, मोटा होकर लौटा हूं। हां, रंग कुछ काला हो गया है। सो तुम जानो, पहाड़ों की धूप बड़ी तेज होती है।"

"सुना है, बरफ भी वहां बहुत होती है"—दीनू काका ने पीछे से पूछा।

रामनाथ ने जवाब दिया, "होती है दीनू काका। जब मार्च-अप्रैल में मंदिर के पट खुलते हैं, तब लोग फावड़े लेकर चलते हैं।"

"वह किसलिए ?"

"रास्ते में बर्फ जम जाती है, उसे काटने के लिए। पर काका, मैं तो सितंबर में गया था। बड़ा सुहावना मौसम था। उन दिनों भीड़ भी नहीं होती। पानी नहीं पड़ता। झरनों में पानी कम हो जाता है। पहाड़ के खिसकने का डर नहीं रहता। आकाश साफ रहता है और काटनेवाली मक्खियां भी मर जाती हैं।"

चौधरी पूछ बैठे, "पर बेटा, सरदी तो बढ़ जाती होगी ?"

"ना काका, तब तो सरदी कम हो जाती है। हां, दशहरे के बाद बढ़ती है। उन दिनों तो पहाड़ हरे रहते हैं। बरफ भी दशहरे के आस-पास ही पड़नी शुरू होती है। हम जब लौट रहे थे, तब चोटियों पर बरफ गिरनी शुरू हुई थी। ऊंचे पहाड़ों की बात अलग है। वे तो सारे साल सफेद रहते हैं। लेकिन अजब माया है कुदरत की! उन पहाड़ों पर तालाब भी होते हैं। कहीं-कहीं तो बरफ के बीच में गर्म पानी के तालाब मिलते हैं।"

यह सुनकर सब चकित रह गये। बर्फ में गरम पानी के तालाब! कई क्षण बाद चौधरी ने कहा, "भइया रामनाथ! वहां तो बड़ी अजीब-अजीब बातें होती हैं। तुम ऐसे कबतक बताओगे? मेरा विचार है, अब यात्रा का हाल शुरू करो।"

रामनाथ बोला, "हां-हां, अब मैं आप सबको सीधा चमोली ले चलूंगा।"

"चमोली! वहां क्या है?"

"चमोली वह जगह है, जहां तक तब मोटर की सड़क बनी हुई थी। वहां पहुंचने के लिए तीन ओर से रास्ता है। रानीखेत से, कोटद्वार होकर पौड़ी (गढ़वाल) से और हरिद्वार होकर देवप्रयाग से। ये तीनों रास्ते

पहले रुद्रप्रयाग में मिलते हैं। रुद्रप्रयाग में मंदाकिनी और अलकनंदा का संगम है। मंदाकिनी केदारनाथ से जाती है और अलकनंदा बद्रीनाथ से। रुद्रप्रयाग से जो लोग केदारनाथ जाना चाहते हैं, वे मंदाकिनी के किनारे-किनारे पैदल चले जाते हैं। बीच में फाटा गांव से एक रास्ता चमोली जाने को मिलता है। केदारनाथ से लौटने पर यात्री इसी रास्ते चमोली जाते हैं। रुद्रप्रयाग से सीधे चमोली जाना चाहें, तो मोटर का रास्ता है। चमोली से बद्रीनाथ कुल ४७ मील रह जाता है।"

"यहां से पैदल जाना पड़ता है?"

"हां, अब तो ९ मील और मोटर की सड़क बन गई है। एक जमाना था जब इस एक यात्रा में महीनों लग जाते थे। अब एक महीने में बद्री-केदार दोनों घूम आओ।"

"एक महीने में!"

"अजी साहब, साथी जवान हों, तो बीस दिन में।"

सबको बड़ा अचरज औ हर्ष हुआ। रामनाथ बोला, "पैदल के रास्ते भी अब पहले जैसे भयानक नहीं रहे। वैसे आप जानो, पहाड़ आखिर पहाड़ है। हम लोग अलकनंदा के दाहिने किनारे के साथ-साथ चले। रास्ते में उधर से भेड़-बकरियों पर नमक लादे भोट लोग

ग्रा रहे थे। ये लोग तिब्बत ग्रौर भारत के बीच तिजारत करते हैं। इधर-उधर की ढलान पर खेत बने हुए थे। बीच-बीच में छोटे-छोटे गांव भी बसे थे। ऊंचे-ऊंचे पहाड़ों पर झरनों के ग्रास-पास एक-दूसरे के ऊपर बसे हुए ये गांव ग्रौर खेत बड़े प्यारे लगते थे। इन्हें देखते हुए हम नौ मील परे पीपलकोटी पहुंच गये। यहां जानवरों की खालें, दवाइयां ग्रौर कस्तूरी ग्रच्छी मिलती हैं। एक रात यहां ग्राराम करके हम दूसरे दिन ग्रगली चट्टी की ग्रोर चले।"
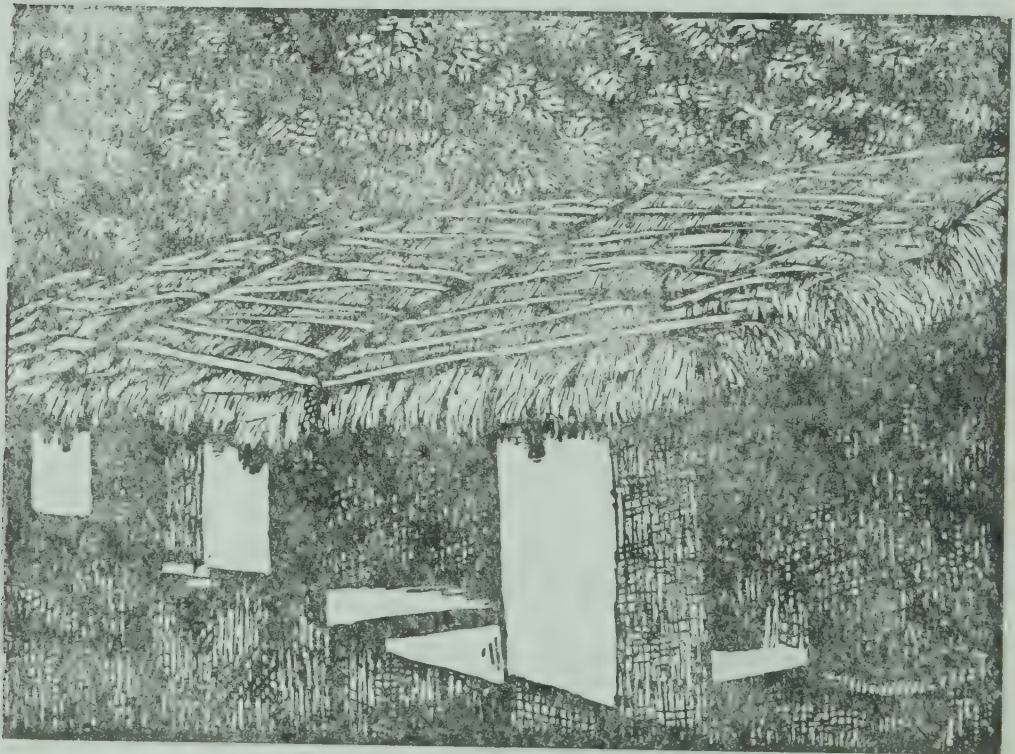
रास्ते में मिलनेवाली एक चट्टी

"चट्टी क्या होती है, भैया ?" चौधरी ने पूछा।

"रास्ते में ठहरने के लिए जो पड़ाव बने हैं, उन्हीं-को चट्टी कहते हैं। कहीं कच्चे मकान, कहीं पक्के; पर खाने-पीने का सामान सब चट्टियों पर मिलता है। बरतन भी मिल जाते हैं। दूध, दही, मावा, पेड़े सब-कुछ मिलता है, जूते-कपड़े तक। जगह-जगह काली कमली-वाले बाबा ने धर्मशालाएं बनवा दी हैं। दवाइयां भी मिलती हैं। डाकखाने भी हैं और सरकार ने पाखाने भी बनवा रखे हैं।"

"तब तो बड़ा आराम है।"

"आराम तो है ही, रास्ते में बड़े प्यारे-प्यारे दृश्य भी देखने को मिलते हैं। कुछ आगे बढ़े, तो गरुड़-गंगा का संगम मिला। यहां गरुड़-गंगा अलकनंदा में मिलती है। यहीं पर गरुड़जी का मंदिर है। कहते हैं, लौटती बार जो गरुड़-गंगा में नहाकर पत्थर का एक टुकड़ा पूजा करने के लिए घर ले आता है, उसे सांपों का डर नहीं रहता।"

"तब तो तुम दस-बीस पत्थर ले आते।" गोपाल पंडित ने कहा।

"पर दस-बीस बार उस सरदी में नहाता कौन ?"

"ओहो, तो नहाना जरूरी है ?"

"जी हां। यहीं से पातालगंगा की चढ़ाई शुरू होती है।

सारे रास्ते में चीड़ और देवदार के पेड़ हैं। उनकी शोभा देखकर मन खिल उठता है। चढ़ाई की मेहनत सफल हो जाती है। वैसे पातालगंगा सचमुच पाताल में है। नीचे देखो तो डर लगता है। पानी मटमैला है, पर बहाव बड़ा तेज है। किनारे का पहाड़ हमेशा टूटता रहता है। सो सड़क कैसे रह सकती है! बस एक संकरी-सी टेढ़ी-मेढ़ी पगडंडी बनी है, जैसे काली घटा में बिजली

पहाड़ों में होकर भयंकर मार्ग

चमकती है। दो मील तक ऐसा ही भयानक रास्ता चला

गया है। हमारा अगला पड़ाव गुलाबकोटी में था। कहते हैं, सतयुग में यहीं पर पार्वती ने तप किया था। वह शिवजी महाराज से विवाह करना चाहती थीं। इसके लिए सालों पत्ते खाकर रहीं। इसीसे आज इस बन का नाम 'पैखंड' यानी 'पर्णखंड' है। वहां जानेवाले सब लोग उस पुरानी कहानी को याद करते हैं और फिर 'जोषीमठ' पहुंच जाते हैं। सारे गढ़वाल में शायद यहीं पर फल होते हैं। फूलों की तो पूछो मत। जोषीमठ का नाम स्वामी शंकराचार्य के साथ भी जुड़ा हुआ है।"

दीनू काका बड़े ध्यान से सुन रहे थे। शंकराचार्य का नाम सुनकर बोले, "भैया, स्वामी शंकराचार्य तो पारसाल दिल्ली में आये थे।"

रामनाथ ने हंसकर कहा, "दीनू काका, मैं जिन शंकराचार्य की बात कर रहा हूं, वह तो सैकड़ों साल पहले हुए हैं।

"तुमने उनकी कहानी नहीं सुनी। बड़े विद्वान थे। कुल बत्तीस साल जीवित रहे। इस छोटी उम्र में वह इतने काम कर गये कि अचरज होता है। बड़े-बड़े पोथे लिखे। सारे देश में घूम-घूमकर धर्म का प्रचार किया। फिर देश के चारों कोनों पर चार मठ बनाये। पूरब में पुरी, पच्छिम में द्वारिका, दक्खिन में शृंगेरी और उत्तर

में जोषीमठ। इन चारों मठों के गुरु आजतक शंकराचार्य कहलाते हैं। सबसे पहले शंकराचार्य को आदि-शंकराचार्य कहते हैं। इन्होंने ही बद्रीनाथ का मंदिर फिर से बनवाया था। उसकी कहानी बद्रीनाथ पहुंचकर बतायेंगे। अभी तो हम जोषीमठ पहुंचे हैं। सरदी के दिनों में जब बद्रीनाथ बरफ से ढक जाता है, तो वहां के रावल मूर्ति लेकर यहीं आकर रहते हैं। बद्रीनाथ के मंदिर में जो मालाएं काम में आती हैं, वे भी यहीं से जाती हैं। बड़ी सुगंध होती है उनमें। लेकिन यहां एक बड़ी विचित्र बात होती है।"

"क्या ?" कई लोगों ने एक साथ पूछा।

"यहां के मंदिर में पैसा नहीं चढ़ाया जाता।"

"तो ?"

"किसी बुरी बात को छोड़ने की कसम खाई जाती है।"

सब लोगों ने एक बार फिर अचरज से एक-दूसरे को देखा, लेकिन रामनाथ नहीं रुका। बोला, "यहां पर मैंने कीमू (शहतूत) का एक पेड़ देखा। कहते हैं, इसीके नीचे बैठकर शंकर-स्वामी ने अपनी पुस्तकें लिखी थीं। यही नहीं, नीचे नगर में जो मंदिर हैं, उनमें से एक में नृसिंह भगवान

की मूर्ति है। काले पत्थर की उस सुंदर मूर्ति का बांया हाथ बड़ा पतला है। वहां के पुजारी ने बताया कि वह हाथ बराबर पतला होता जा रहा है। जब वह गिर जायगा, तब यहां से कोई आगे न बढ़ सकेगा। सब रास्ते टूट जायेंगे।"

यह सुनकर सब लोग चौंक उठे। चौधरी ने कहा, "सच, क्या ऐसा होगा?"

"पता नहीं, क्या होगा। सुनी-सुनाई बातें हैं। अपने राम तो हिमालय की शोभा देखते हुए आगे बढ़ते चले गये। जोषीमठ से आगे दो मील की खड़ी उतराई है। पर बीच-बीच में मिलनेवाले सुंदर झरने सब थकान दूर कर देते हैं। उनका संगीत कानों को बड़ा प्यारा लगता है। उसे सुनते-सुनते हम विष्णुप्रयाग पहुंच गये। यहां विष्णु गंगा और धौली गंगा का मिलन होता है। आकाश को छूनेवाले पहाड़ों की ये बेटियां जब आपस में मिलती हैं, तो मतवाली हो उठती हैं। इतनी मतवाली कि डर लगता है। ओह, क्या बताऊं, कैसी भयंकर जगह है वह! मौत तो वहां सदा साथ-साथ चलती है, काका! पर उससे कोई डरता नहीं। नदी के पुलों को बात लो। ऐसे झूलते हैं कि जैसे अब गिरे, अब गिरे। कहीं-कहीं तो रस्सी के पुल हैं। एक बार झिझके,

तो सीधे यमपुर ! विष्णु गंगा और धौली गंगा का पुल लोहे का बना हुआ है। एक साथ उस पर चार आदमी या दो खच्चर जा सकते हैं। लेकिन काका, जहां खतरा-ही-खतरा हो, वहां उसीसे प्यार हो जाता है। फिर खतरा भी वह, जो प्यारा हो, सुंदर हो। अहा, आकाश को छूनेवाली बर्फ से ढकी चोटियां, उतावली-सी भागती हुई नदियां, किनारे पर ऊपर उठता चला गया वन, वन में देवदार के सुंदर पेड़, तरह-तरह के पक्षियों का गाना, कभी सूरज की तेज किरणों की रोशनी, कभी ऊदी घटाओं की शीतल छाया—इस तरह रास्ते की शोभा देखते-देखते पांडुकेश्वर पहुंच गये।

"पांडुकेश्वर के पास फूलों की एक सुंदर घाटी है, जिसे देखने दुनिया भर के लोग आते हैं। यहीं पर लोकपाल है, जहां कहते हैं कि सिक्खों के दसवें गुरु गोविंदसिंहजी ने अपने पिछले जन्म में तप किया था। पांडुकेश्वर के बारे में बताया जाता है कि पांडवों के पिता महाराज पांडु ने इसे बसाया था।"

"हां-हां, मैंने पढ़ा है कि महाराज पांडु वनवास के दिनों में यहीं रहते थे। यहीं पांडव पैदा हुए थे।" गोपाल पंडित बोल उठे।

"और महाभारत के बाद जब पांडव स्वर्ग गये थे,

सो यहीं होकर गये थे।" दीनू काका ने कहा।

रामनाथ बोला, "आप ठीक कहते हैं। वे यहां कई बार आये थे। शिवजी महाराज से धनुष लेने अर्जुन इसी रास्ते से गये थे। द्रौपदी के लिए कमल लेने यहीं के वनों में भीम आये थे। आज भी नदी के बायें किनारे पर जो पहाड़ है, उसको 'पांडु चौकी' कहते हैं। इसकी चोटी पर चौपड़ बनी हुई है। कहते हैं, स्वर्ग जाते समय यहीं बैठकर उन लोगों ने आखिर बार चौपड़ खेली थी। यह भी सुना है कि यहां का योगबद्री का मंदिर उन लोगों ने ही बनवाया था। ये बातें कहां तक सच हैं, कुछ पता नहीं, पर इतना जरूर सच है कि हमारे पुरखा प्रकृति को बड़ा प्यार करते थे, वनों में खूब घूमते थे। खतरे से वे बिल्कुल नहीं डरते थे। हम भी यहां एक रात रहे। फिर आगे चल दिये। आगे का रास्ता बहुत ऊंचा-नीचा है। पहाड़ कहीं काला, कहीं नीला, कहीं कच्चा। बीच में कहीं निरी मिट्टी, कहीं जमा हुआ बर्फ। हम घुटनों को सहलाते-सहलाते ऊपर-ही-ऊपर उठते चले गये। जितना ऊपर जाते, पहाड़ उतने ऊपर उठ जाते। यहां भोज-पत्र बहुत हैं। जब कागज नहीं थे, तब भोज-पत्र पर किताबें लिखी जाती थीं। यहां गंगा कई बार पार करनी पड़ती है।"

चौधरी ने एकदम पूछा, "भैया, तुम बार-बार 'गंगा-गंगा' कहते हो। आखिर वहां कितनी गंगा हैं ?"

रामनाथ बोला, "उधर सब नदियों को 'गंगा' कहते हैं। असल में पुराने जमाने में गंगा का मतलब ही नदी था। जैसे पाताल गंगा, विष्णु गंगा, गरुड़ गंगा आदि। और भाई, जैसे ये गंगाएं मिलती हैं, वैसे ही रास्ते में बहुत-से मंदिर और तीरथ भी मिलते हैं। बद्रीनाथ से पहले हनुमानचट्टी आती है। यहां हनुमान मंदिर है। कहते हैं, यहां पांडवों को हनुमान मिले थे। यहां से चढ़ाई बड़ी जान-लेवा है। किसी तरह चढ़ते-चढ़ते हमने कंचनगंगा पार की। बस, 'कुबेर शिला' आ गई। आंख उठाकर जो देखा, तो सामने विशालापुरी थी—वह विशालापुरी, जिसके लिए धर्मशास्त्र में लिखा है कि तीनों लोकों में बहुत-से तीर्थ हैं, पर बद्री के समान न था, न होगा।

"यात्री लोग यहां 'जय बद्री-विशाल' कहकर आकाश को गुंजा देते हैं। क्यों न गुंजायें ? यहीं के लिए तो वे इतने दुख उठाकर आते हैं। इसी पुरी के दर्शन करने के लिए तो वे सालों से पैसा जोड़ रहे थे। यहां हमारे साथ एक अजीब घटना घटी। जब हम शिला के पास पहुंचे, तो एक युवक नीचे लौट रहा था। वह 'जय बद्री-

विशाल' कहकर आगे बढ़ गया। हम पुरी की ओर चले। पर कुछ देर बाद देखा कि वह युवक तेजी से हमारे पीछे पीछे आ रहा है। मैंने पूछा, 'कुछ भूल गये थे क्या ?'

"बोला, 'मैं एक पाप करने जा रहा था। नारायण, नारायण !'

"मैं चौंका, 'कैसा पाप ?'

"वह बोला, 'मैं दशहरे तक ठहरने का विचार करके आया था, पर जाड़े के डर से आज भागा जा रहा था। हूं न पापी ? तुम लोग आये हो और मैं भाग रहा हूं ! क्या तुम्हें जाड़ा नहीं लगता ? नारायण-नारायण ! भगवान ने मुझे बचा लिया।'

"और वह पुरी की ओर भागा चला गया। मैं उस की भक्ति देखकर चकित रह गया। इससे पहले विष्णु गंगा पर एक और दुबला-पतला बूढ़ा आदमी मिला था। अकेला था। पास में कौड़ी भी नहीं थी। पैर कांपते थे। ऊंचा सुनता था। कपड़ों के नाम पर उसके पास थी एक धोती और एक कुरता। यात्रा करके लौट रहा था। कैलास जाना चाहता था। शिव की तलाश थी, पर भोजन के अलावा वह किसीसे कुछ नहीं लेता था, देने पर भी नहीं। बातें इस तरह करता था, जैसे कोई गंवार हो, पर जो कुछ कहता था, पते की कहता था।

"लोग उसका मजाक उड़ाते थे, पर वह शांत रहा। बातों-बातों में मुझसे बोला, 'बाबूजी ! भूख एक दिन की हो या तीन दिन की, आदमी खाता उतना ही है, जितना उसका पेट हो। ज्यादा कोई खा ही नहीं सकता। जो खाये, वह पाप करे।'

"फिर जाते-जाते बोला, 'अच्छा बाबूजी, चलता हूं। दिन को दर्शन तो हो ही गये। अब मर भी गया तो कोई बात नहीं। पहुंच गया तो फिर किसी दिन कैलास को चल दूंगा।'

"और वह चल पड़ा। उसके पैर लड़खड़ा रहे थे। पर वह आगे बढ़ रहा था। उसने किसीसे एक पैसा तक नहीं मांगा था।"

उसकी कहानी का सब पर असर हुआ। कुछ देर सब चुप रहे। रामनाथ ने फिर कहना शुरू किया :

"विशालपुरी अलकनंदा के दाहिने किनारे पर बसी हुई है। छोटा-सा बाजार है। धर्मशालाएं हैं। घर हैं। थाना-डाकघर सबकुछ हैं। नारायण पर्वत के चरणों में बद्रीनाथ का मंदिर है। जब हम वहां पहुंचे, तो उसके सुनहरे कलश पर सूरज की किरणें पड़ रही थीं। बर्फ से ढंके हुए आकाश को छूनेवाले पहाड़ों के बीच वह छोटी-सी नगरी बड़ी अच्छी लगती थी। देखते ही सिर

झुक गया, फिर ऊंचा उठ गया।"

दीनू काका ने पूछा, "यह क्या? सिर झुका भी और ऊंचा भी हुआ!"

बद्रीनाथ के मंदिर का कलश

"यही तो बात है, काका!" रामनाथ बोला, "झुका तो वहां की शोभा देखकर और ऊंचा यह सोचकर हुआ कि आदमी सब-कुछ कर सकता है। सब-कहीं जा सकता है। बड़ी-से-बड़ी, भयानक-से-भयानक बाधा उसको नहीं रोक सकती। बस, आदमी को घमंड नहीं करना चाहिए। सो इस तरह हम बद्रीनाथ पहुंच गये। अक्तूबर के महिने में वहां रात बिताना हंसी-खेल नहीं है। ऊपर तक गरम कपड़ों में लदे रहने पर भी हम

कांप रहे थे। जी चाहता था कि किवाड़ बंद करके आग के पास बैठे रहें। फिर भी वहां कुछ लोग थे, जो बहुत थोड़े कपड़े पहने हुए थे। कई साधुओं ने तो केवल लंगोटी ही लगा रखी थी। स्वभाव की बात है।"

"क्यों जी, बद्रीनाथ कितना ऊंचा होगा ?"

"१०३८० फुट, यानी कोई दो मील।"

"दो मील !"

"जी हां। एक समय था जब पथ और भी बीहड़ थे। तुमने ब्रह्मा, विष्णु, महेश का नाम तो सुना होगा।"

गोपाल पंडित एकदम बोले, "क्या बात करते हो, रामनाथ ! भारत में रहनेवाला ब्रह्मा, विष्णु, महेश को नहीं जानेगा ! ब्रह्मा ठहरे दुनिया को बनानेवाले। विष्णु उसे पालते हैं और जब दुनिया का काम पूरा हो जाता है, तो महेश उसे मिटा देते हैं।"

"ठीक कहा, पंडितजी ! और आपने यह भी पढ़ा होगा कि ब्रह्माजी के बहुत-से बेटे थे। उनमें एक का नाम था दक्ष। दक्ष की सोलह बेटियां थीं। तेरह का विवाह धर्मराज से हुआ था। उन तेरह में से एक का नाम था श्रीमूर्ति। उनके दो बेटे थे। नर और नारायण। दोनों बहुत ही भले, एक-दूसरे से कभी अलग नहीं होते

थे। आज भी हम उनका नाम एक साथ लेते हैं। जिनका नाम पहले लेते हैं, वह नर छोटे थे। इसी बात से तुम समझ सकते हो कि वे एक-दूसरे को कितना चाहते थे। अपनी मां को भी वे बहुत प्यार करते थे। एक बार दोनों ने अपनी मां की बड़ी सेवा की। मां बहुत खुश हुईं। बोलीं, 'मेरे प्यारे बेटो, मैं तुमसे बहुत खुश हूं। बोलो, क्या चाहते हो ? जो मांगोगे, वही दूंगी।'

"आजकल के बेटे होते, तो मिठाई खाने और सिनेमा जाने को पैसे मांगते, पर जानते हो, उन्होंने क्या मांगा ?"

"क्या मांगा ?"

"उन्होंने मांगा, 'मां, हम बन में जाकर तप करना चाहते हैं। आप अगर सचमुच कुछ देना चाहती हो, तो यह वर दो कि हम सदा तप करते रहें।'

"बेटों की यह बात सुनकर मां को बहुत दुख हुआ। अब उनके बेटे उनसे बिछुड़ जायंगे। पर वह वचन दे चुकी थीं। उनको रोक नहीं सकती थीं। इसलिए वर देना पड़ा। वर पाकर दोनों भाइयों ने मां के चरण छुए। फिर तप करने चले गये। वे सारे देश के वनों में घूमने लगे। घूमते-घूमते हिमालय पहाड़ के वनों में पहुंचे। हिमालय का मतलब है हिम+आलय यानी बर्फ का घर। मैं बता चुका हूं कि चोटी पर

वहां हमेशा बर्फ रहती है। जंगल भी आधे साल बर्फ से ढंके रहते हैं। उन दिनों की हालत तो आज से बहुत ही खराब थी, लेकिन तप करनेवाले तो ऐसी ही जगह चाहते हैं। कहते हैं, तब यहां बदरी अर्थात बेर के पेड़ बहुत थे। इसीसे इस वन का नाम 'बदरी वन' पड़ गया। यहां और भी बहुत-से सुख थे। तरह-तरह की दवाइयों के पौधे थे। कंद-मूल-फल थे। तपस्वी लोग भूख के साथ तन-मन का रोग भी मिटाते थे। फिर गंगा का तट। अलकनंदा गंगा की सबसे बड़ी धारा है। कल-कल करते चांदी-से झरने। जब सूरज की किरणें उनसे मिलने आतीं, तो ढेर सारे इंद्रधनुष बन जाते। जब ये ही किरणें हिमालय की चोटियों पर पड़तीं, तो सारी दुनिया जगमग-जगमग कर उठती।

"इसी वन में अलकनंदा के दोनों किनारों पर दो पहाड़ हैं। दाहिनी ओर वाले पहाड़ पर नारायण तप करने लगे। बांई ओर वाले पर नर। आज भी इन दोनों पहाड़ों के यही नाम हैं। यहां बैठकर दोनों ने भारी तप किया, इतना कि देवलोक का राजा डर गया।"

"क्यों ?" चौधरी ने पूछा।

रामनाथ ने हंसकर कहा, "इसलिए कि कहीं उसका राज न छिन जाय। सो उसने उन दोनों को तप से डिगाने के लिए अप्सराओं को भेजा। अप्सराएं कामदेव और बसंत को लेकर बदरी-वन में आईं। बसंत ने आते ही चारों ओर फूल खिला दिये। हरियाली छा गई। कामदेव ने ऐसी हवा चलाई कि मुरदे भी फड़क उठे। सारा बन भीनी-भीनी महक से भर गया। फिर उन अप्सराओं ने नाचना-गाना शुरू किया। ओहो, वह समां बंधा कि हवा भी सुध-बुध भूल गई। सूरज, चांद और तारे सब रुक गये। शेर और गाय, भालू और हिरन, सब भागे-भागे वहां आ पहुंचे, पर नहीं जागे तो नर-नारायण नहीं जागे। आखिर जब उनको नाचते-गाते सालों बीत गये, तब एक दिन नारायण मुनि ने आंखें खोलीं। सबको देखा। न जाने उन आंखों में क्या था कि सब कांप उठे। उन्हें कांपते देखकर नारायण मुनि हंसे और प्यार भरे वचन बोले, 'डरो नहीं। आप सब लोग हमारे मेहमान हैं। आपको कोई कष्ट तो नहीं हुआ ?'

" 'जी नहीं।' उनमें से एक ने कहा।

" 'तब ठीक है,' नारायण बोले, 'जबतक आपका जी चाहे यहां रहो। खाओ-पिओ, नाचो-गाओ। और

देखो, जब जाओ, तो हम तुम्हारे राजा के लिए एक उपहार देंगे । वह तुम उन्हें दे देना ।'

"पुराणों में लिखा है कि यह कहकर नारायण मुनि ने ग्राम की एक डाली ली और उससे अपनी जांघ मथने लगे । देखते-देखते उसमें से ढेर सारी चांद-जैसी नारियां निकल पड़ी । उनके सामने देवलोक की अप्सराएं काली पड़ गईं । मुनि ने इनमें से एक नारी को उनको दिया । वही नारी दुनिया की सबसे सुंदर नारी मानी जाती है । उसका नाम है उर्वशी । विशालापुरी से कुछ आगे बदरी-वन में 'उर्वशी कुंड' बना हुआ है । वह आज भी उस कथा की याद दिलाता है । उर्वशी को देखकर देवलोक के राजा इंद्र का सिर झुक गया । साथ ही उसे याद आया कि नर-नारायण साधारण मुनि नहीं हैं, भगवान का अवतार हैं । कहते हैं कि कलियुग के आने तक वे वहीं तप करते रहे । जब कलियुग के आने का समय हुआ, तब वे अर्जुन और कृष्ण के रूप में जन्म लेने के लिए बदरी-वन से चले । उस समय भगवान ने दूसरे मुनियों से कहा, 'मैं अब इस रूप में यहां नहीं रहूंगा । नारद शिला के नीचे मेरी एक मूर्ति है, उसे निकाल लो और यहां एक मंदिर बनाओ । आजसे उसीकी पूजा करना ।' "

गोपाल पंडित बोले, "तो यह है बद्रीनाथ के मंदिर की कहानी ?"

"जीहां, यह कहानी पुराणों में आती है। यह कथा सच हो या झूठ, इससे एक बात साफ हो जाती है, यानी यह मंदिर बहुत पुराना है। लिखा है, मुनियों ने मूर्ति को निकाला और नारायण मुनि के कहने के अनुसार वहां एक मंदिर बनवाया। उस मंदिर में उसी मूर्ति की पूजा होने लगी। कहते हैं, आज भी मंदिर में वही मूर्ति है। वह सांवली है। उसमें भगवान बद्रीनारायण पद्मासन लगाये तप कर रहे हैं। खूब ठाट-बाट से इसकी चार बार पूजा होती है। रेशमी कपड़े और हीरे-जड़े गहने पहनाये जाते हैं। आज जो मंदिर बना है, वह भी बहुत सुंदर है। पैड़ियां चढ़कर जो दरवाजा आता है, उसमें बहुत बढ़िया जालियां बनी हैं। ऊपर तीन सुनहरे कलश हैं। अंदर चारों ओर गरुड़, हनुमान, लक्ष्मी और घंटाकर्ण आदि की मूर्तियां हैं। फिर भीतर का दरवाजा है। उसपर भक्तों की भीड़ रहती है। सैकड़ों मील का बीहड़ रास्ता पार करके आनेवाले भक्त गद्गद होकर पुकारते हैं। यात्रा के दिनों में बड़ी धूम रहती है। अंदर मूर्तिवाले कमरे का दरवाजा चांदी का बना हुआ है।

उनके पास गणेश, कुबेर, लक्ष्मी, नर-नारायण, उद्धव,

बद्रीनाथ मंदिर का सिंहद्वार

नारद और गरुड़ की मूर्तियां हैं। यहां बराबर मंत्रों का पाठ, घंटों का शोर और भजनों की आवाज गूंजती रहती है। अखंड जोत भी जलती रहती है और चढ़ावा ! चढ़ावे की बात मत पूछो। अटका आदि बहुत-से चढ़ावे हैं। वैसे अब सब इंतजाम सरकार के हाथ में है। एक बात बड़ी अजीब-सी है। यहां के सभी पुजारी, जो रावल कहलाते हैं, दक्षिण के हैं। इससे पता लगता है कि भारत के रहनेवाले सब एक हैं।"

गोपाल पंडित बोले, "क्यों रामनाथ, वहां कुछ और भी है ?"

"जीहां, सात कुंड हैं। पांच शिलाएं हैं। ब्रह्म-कपाली है। अनेक धाराएं हैं। बहुत-सी गंगाएं हैं। जो मुनि, ऋषि या अवतार यहां रहते थे या आये थे, उनकी याद में यहां कुछ-न-कुछ बना है। जैसे जब नर-नारायण यहां से न लौटे, तो उनके माता-पिता भी यहीं आ बसे।"

चौधरी ने सांस लेकर कहा, "हां भाई, मां-बाप की ममता ऐसी ही होती है।"

"जीहां, इनके नाम पर यहां मंदिर आदि बने हैं। नारद ने भगवान की बहुत सेवा की थी। उनके नाम पर शिला और कुंड दोनों हैं। प्रह्लाद की कहानी तो आप लोग जानते ही हैं। उसके पिता को मारकर जब नृसिंह भगवान क्रोध में भरे फिर रहे थे, तब यहीं आकर आवेश शांत हुआ था। उसकी याद में नृसिंह-शिला आज भी वहां मौजूद है। ब्रह्म-कपाली पर पिंडदान किया जाता है।

"यहां से दो मील आगे भारत का आखिरी गांव 'माना' है। ढाई मील पर माता मूर्ति की मढ़ी है। पांच मील पर वसुधारा है। वसुधारा दो सौ फुट से गिरने-

वाला एक सुंदर झरना है। उससे आगे शतपथ, स्वर्ग-द्वार और अलकापुरी है। फिर तिब्बत का देश है। राह बड़ी विकट है, पर साहसी आदमी के चरण हर कहीं पहुंच जाते हैं। फिर उस वन में तो तीर्थ-ही-तीर्थ हैं। सारी भूमि तपोभूमि है। ऐसा लगता है, जैसे हमारे पुरखों ने सोच-समझकर ऐसी विकट जगह तीर्थ बनाये थे। वे चाहते थे कि आदमी साहसी और खतरे को प्यार करनेवाला बना रहे। लेकिन अरे ! मैं एक बात बताना तो भूल ही गया। वहां पर गरम पानी का भी एक झरना है। इतना गरम पानी है कि एकाएक पैर दो, तो जल जाय। ठीक अलकनंदा के किनारे पर है। अलकनंदा में हाथ दो, तो गल जाय, झरने में दो, तो जल जाय।

"कैसी विचित्र माया है ! हम उसमें खूब नहाये। सारी थकावट और सारी सरदी दूर हो गई।

"और हां, मैंने अभी स्वामी शंकराचार्य का नाम लिया था।"

"हां-हां, तुमने कहा था कि स्वामीजी ने यह मंदिर बनवाया था।"

"हां, कहते हैं कि आज से कोई दो-ढाई हजार बरस पहले कुछ विरोधी लोगों ने बद्रीनारायण की

मूर्ति नारद कुंड में फेंक दी थी। मंदिर भी शायद तोड़ दिया था। जब आदि-शंकराचार्य इधर घूम रहे थे, तब उनको इस बात का पता लगा। उन्होंने मूर्ति को निकाला। मंदिर तो बाद में बना। तब तो एक पेड़ के नीचे उसे स्थापित किया गया था। कहते हैं, उस पेड़ की छाया चालीस कोस तक पड़ती थी। पेड़ की बात शायद ठीक न हो, पर यह बात ठीक है कि यह मंदिर कई बार बना है। जब बरफ़ पड़ती है तो उसके पहाड़-के-पहाड़ नीचे सरक आते हैं। फिर राह में मंदिर क्यों न हो, उसे तोड़-फोड़ देते हैं।

"उस पुरी में हम तीन दिन ठहरे। माना गांव देखा, वसुधारा का प्रपात देखा। उन दिनों वहां गेहूं कट रहे थे। उन्हें घरों में दबाकर लोग नीचे चले आते हैं। यहां लाल चोंच व पंजोंवाले कौए होते हैं। यहां हमने याक भी देखे। ये बोझा ढोते हैं। इनकी पूंछ का चंवर बनता है।

"ये ही सब बातें देखते-देखते हम लौट चले। फिर वही पुराना रास्ता। सरदी बढ़ रही थी। नीचे की चोटियों पर भी बरफ़ पड़ने लगी थी और राह सूनी हो चली थी। कोई साहसी ही जाता मिलता था। सभी

नीचे उतर रहे थे। पांडुकेश्वर और जोषीमठ आदि तक ठहरते हुए चमोली आये। यहां बस मिली। इतने दिन पैदल घूमने के बाद मोटर की सवारी बड़ी अच्छी लगी। पर जब पहाड़ की संकरी और टेढ़ी मेढ़ी राह पर घूमती और शोर मचाती वह आगे बढ़ी, तो लगा कि इससे तो पैदल चलना ही कहीं अच्छा था। मोटर के गिरने का डर लगता था। जब वह बार-बार मुड़ती, तो ऐसा लगता कि अब गिरी। पर वह गिरी नहीं। हम आराम से पौड़ी, पौड़ी से कोटद्वार आ गये। कोटद्वार से रेल मिली और दिल्ली पहुंच गये।

"घर पहुंचकर सुख भी हुआ दुख भी। सुख यात्रा पूरी होने का था। दुख इस बात का था कि अब वे सुंदर सुहावने वन, पर्वत, नदियां, झरने, प्रपात और मंदिर देखने को न मिलेंगे। प्रकृति का वह रूप याद करके मन आज भी पुलक उठता है और उड़-उड़-कर उसी विकट राह पर जाना चाहता है।"

इतना कहकर रामनाथ चुप हो गया। चौपाल में कुछ देर सभी चुप रहे फिर सबने उसे धन्यवाद दिया और तय किया कि अगली बार इस गांव का एक दल बद्रीनाथ जरूर जायगा।

समाज विकास - माला की पुस्तकें

१. बदरीनाथ
२. जंगल की सैर
३. भीष्म पितामह
४. शिवि और दधीचि
५. विनोबा और भूदान
६. कबीर के बोल
७. गांधीजी का विद्यार्थी-जीवन
८. गंगाजी
९. गौतम बुद्ध
१०. निषाद और शबरी
११. गांव सुखी, हम सुखी
१२. कितनी जमीन ?
१३. ऐसे थे सरदार
१४. चैतन्य महाप्रभु
१५. कहावतों की कहानियां
१६. सरल व्यायाम
१७. द्वारका
१८. बापू की बातें
१९. बाहुबली और नेमिनाथ
२०. तंदुरुस्ती हजार नियामत
२१. बीमारी कैसे दूर करें ?
२२. माटी की मूरत जागी
२३. गिरिधर की कुंडलियां
२४. रहीम के दोहे
२५. गीता-प्रवेशिका
२६. तुलसी - मानस - मोती
२७. दादू की वाणी
२८. नजीर की नज्में
२९. संत तुकाराम
३०. हजरत उमर
३१. बाजीप्रभु देशपांडे
३२. तिरुवल्लुवर
३३. कस्तूरबा गांधी
३४. शहद की खेती
३५. कावेरी
३६. तीर्थराज प्रयाग
३७. तेल की कहानी
३८. हम सुखी कैसे रहें ?
३९. गो-सेवा क्यों ?
४०. कैलास-मानसरोवर
४१. अच्छा किया या बुरा ?
४२. नरसी महेता
४३. पंढरपुर
४४. ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती
४५. संत ज्ञानेश्वर
४६. धरती की कहानी
४७. राजा भोज
४८. ईश्वर का मंदिर
४९. गांधीजी का संसार-प्रवेश
५०. ये थे नेताजी
५१. रामेश्वरम्
५२. कब्रों का विलाप
५३. रामकृष्ण परमहंस
५४. समर्थ रामदास
५५. मीरा के पद
५६. मिल-जुलकर काम करो
५७. कालापानी
५८. पावभर आटा
५९. सवेरे की रोशनी
६०. भगवान के प्यारे
६१. हारूं-अल-रशीद
६२. तीर्थंकर महावीर
६३. हमारे पड़ोसी
६४. आकाश की बातें
६५. सच्चा तीरथ
६६. हाजिर जवाबी
६७. सिंहासन-बत्तीसी भाग १
६८. सिंहासन-बत्तीसी भाग २
६९. नेहरूजी का विद्यार्थी - जीवन
७०. मूरखराज
७१. नाना फड़नवीस
७२. गुरु नानक

मूल्य प्रत्येक का छः आना

१

सस्ता साहित्य मण्डल

सैंतीस नये पैसे